□□□□□□

जनसत्ता 24 मई, 2014 : नई सरकार बनने के बाद उदारवादी माने जाने वाले बुद्धजीवियों में बदले हालात में खुद को ढालने की कोशिशें दिखने लगी हैं। ऐसी ही एक कोशिश हाल में अंगरेजी के 'द हिंदू' अखबार में छपे शिव विश्वनाथन के आलेख में दिखती है। नरेंद्र मोदी द्वारा काशी विश्वनाथ मंदिर में पूजा और फिर उसके बाद गंगा आरती से बात शुरू होती है। टीवी पर यह दृश्य आने पर संदेश आने लगे कि बिना कमेंट्री के पूरी अर्चना दिखाई जाए। कइयों का कहना था कि इस तरह पूरी पूजा की रस्म को पहली बार टीवी पर दिखाया गया। इसमें कोई शक नहीं कि मोदी की गंगा आरती पहली बार दिखाई गई। पर धार्मिक रस्म हमेशा टीवी पर दिखाई जाती रही है। राष्ट्रीय नेता सार्वजनिक रूप से धार्मिक रस्मों में शामिल होते रहे हैं, यह हर कोई जानता है। तो एक अध्येता को यह बड़ी बात क्यों लगी? शिव बताते हैं कि मोदीजी के होने से यह संदेश मिला कि हमें अपने धर्म से शर्माने की जरूरत नहीं है। यह पहले नहीं हो सकता था।

कौन-सा धर्म? कैसी शर्म? क्या मोदी महज एक धार्मिक रस्म निभा रहे थे? अगर ऐसा है तो इसके पहले कितनी बार उन्होंने यह आरती की?

सच में वह कोई धार्मिक काम नहीं था। वह आरती किसी भी धार्मिक्ता से बिल्कुल अलग, एक विशुद्ध राजनीतिक कदम थी। उसमें से उभरता संदेश यही था कि राजा आ रहा है।

तकरीबन डेढ़ महीने पहले एक और आलेख में बनारस में केजरीवाल और मोदी की भिड़ंत पर शिव ने लिखा था, 'मोदी जिस भारत-इंडिया, हिंदू-मुसलिम फर्क को थोपना चाहते हैं, बनारस उसे खारिज करता है।' अब मोदी के जीतने पर उनका सुर बदल गया है।

आगे वे किसी दोस्त को उद्धृत कर बिल्कुल निशाने पर मार करते हैं, अंगरेजी बोलने वाले सेक्यूलरिस्ट लोगों ने बहुसंख्यकों को अपना स्वाभाविक जीवन जीने में परेशान कर दिया। इंग्लिश वालों की दयनीय स्थिति पर मैं पहले लिख चुका हूं, पर स्वाभाविक क्या है, इस पर मेरी और शिव की समझ में फर्क है। आगे वे लिखते हैं कि वामपंथी घबरा गए हैं कि अब धर-पकड़ शुरू होगी। वैसे सही है कि इक्तीस फीसद मतदाताओं ने ही भाजपा को बहुमत दिलाया है। ऐसा नहीं कि सारा मुल्क तानाशाह के साथ है। अगर मतदान में शामिल न हुए लोगों को गिनें, तो जनसंख्या का पांचवां हिस्सा भी भाजपा के साथ नहीं होगा।

घबराने की कोई बात सचमुच नहीं है। पर क्या हम भूल जाएं कि पिछली बार के भाजपा शासन के दौरान किताबें कैसे लिखी गईं। आज हम सब वामपंथी दिखते हैं, पर डेढ़ महीने पहले यह डर उन्हें भी था कि मोदी हिंदू-मुसलिम फर्क को थोपना चाहते हैं। एनसीइआरटी की एक किताब में भारत विभाजन पर अनिल सेठी का लिखा एक अद्भुत अध्याय है, जिसमें दोनों ओर आम नागरिकों को विभाजन से एक जैसा पीड़ित दिखाया गया है। यह वाजिब चिंता है कि इस अध्याय को अब हटा दिया जा सकता है। यह सब जानते हैं कि दक्षिणिपंथियों के आने से इतिहास की नई व्याख्या की जाएगी।

शिव का मानना है कि उदारवादी इस बात को नहीं समझ पाए कि मध्यवर्ग के लोग तनाव-ग्रस्त हैं और मोदी ने इसे गहराई से समझा। पहले इन तनावों की

वाम की समझ के साथ शवि सहमत थे, पर अब उन्हें वाम □क गरीोह दखिता है, जसिने धर्म को जीने का सूत्र नहीं, बल्कि □क अंधवश्विास ही माना□ यह पचास साल पुरानी बहस है कि मार्क्स ने धर्म को अफीम कहा या कि उसे उत्पी□तिों की आह माना□ आगे वे वाम को □क शैतान की तरह दखिाते हैं, जसिने संवधिान में वैज्ञानकि चेतना की धारणा डाली ताकि धर्म की कुरीतयिों और अंधवश्विासों से मुक्ति मलि□ रोचक बात यह है कि अंत में वे दलाई लामा को अपना प्रयि वैज्ञानकि कहते हैं□ तो क्या वैज्ञानकि में 'वैज्ञानकि चेतना' की भ्रष्ट धारणा नहीं होती!

उनके मुताबकि यह धारणा □क शून्य पैदा करती और धर्मनरिपेक्षता ब□ाती है, जसिसे ऐसा दमन का माहौल बनता है, जहां आम धार्मकि लोगों को नीची नजर से देखा जाता है□ बेशक, वज्ञिान को सामाजकि मूल्यों और सत्ता-समीकरणों से अलग नहीं कर सकते, पर यह मानना कि जाति, लगिभेद आदि संस्था□, जन्हिें धार्मकि आस्था से अलग करना आसान नहीं, वज्ञिान उनसे भी अधकि दमनकारी है, गलत है□ शवि धर्मनरिपेक्षता को वक्षिोभ पैदा करने वाला औजार मानते हैं□ उनके अनुसार पछिली सरकार ने चुनावों के मद्देनजर लघुसंख्यकों की तुष्टि की और इससे बहुसंख्यकों को लगा कि उनके साथ अन्याय हो रहा है□ तो वह तुष्टि क्या है?

शाहबानो का मामला, पर्सनल लॉ, कश्मीर के लि□ धारा 370, कांग्रेस या दूसरे दलों के चुनावी मुद्दे तो ये नहीं हैं, हालांकि संघ परवािर के लि□ ये संघर्ष के मुद्दे हैं□ चुनाव के मुद्दों में आरक्षण भी है□ पैसा, शराब, मादक पदार्थ, हसिा, क्या नहीं चलता□ जातवािद और सांप्रदायकिता भी□

सवाल है कि कहां तक गरिना ठीक है□ संघ ने खासतौर पर उत्तर भारत में पछि□ वर्गों और दलतिों में झूठी बहुसंख्यक अस्मतिा का अहसास पैदा कयिा और फरि उनमें गुस्सा पैदा कयिा कि तुम्हारे साथ अन्याय हो रहा है□ दूसरी ओर अगर लघुसंख्यकों को कुछ सुवधिा□ दी जा□ तो क्या वह हमारे पारंपरकि मूल्यों के खलिाफ है? अगर नहीं तो सच्चर समति की रपिोर्ट जैसे दस्तावेजों से उजागर लघुसंख्यकों के बुरे हालात के मद्देनजर अगर उनकी तरफ अधकि ध्यान दयिा गया तो इससे □क बुद्धजीवी को क्या तकलीफ?

बनिा वस्तिार में ग□ सरि्फ इस अहसास को ब□ाना कि लघुसंख्यकों का तुष्टीकरण होता है, □क गैर-जम्मिेदाराना रवैया है□ होना यह चाहि□ कि हम सोचें कि देश में लघुसंख्यकों का हाल इतना बुरा क्यों है कि उनका चुनावों के दौरान फायदा उठाना संभव होता है□ उनकी माली और तालीमी हालत इतनी बुरी क्यों है कि उनके बीच से उठने वाली तरक्की-पसंद आवाजें दब जाती हैं□

यह □क नजरयिा हो सकता है कि बहुसंख्यक धर्मनरिपेक्षता को खोखला दमनकारी वचिार मानते हैं□ पर यह भी देखना चाहि□ कि गरीबी और रोजाना मुसीबतों से परेशान लोग बहुसंख्यक अस्मतिा से जु□ राष्ट्र की संकीर्ण धारणा के शकिार हो जाते हैं, यह ऐसा वचिार है, जसिके मुताबकि अपने ही अंदर दुश्मन ढूं□ा जाता है, जैसे जर्मनी में यहूदी, पाकसि्तान और बांग्लादेश में हदिू और भारत में मुसलमान□ इसी असुरक्षा को मोदी और संघ ने पक□ा□ इसके साथ रोजाना जदिंगी में धर्म और अध्यात्म का संबंध ढूं□ना गलत होगा□ धर्मनरिपेक्षता बहुसंख्यकों पर कोई कहर नहीं ढाती□ इसके वपिरीत होता यह है कि संघ परवािर जैसी ताकतों के भेदभाव वाले प्रचार से इंसान की बुनयिादी प्रेम और भलमनसाहत की प्रवृत्तयिां दब जाती हैं□

शवि बताते हैं कि हमारे धर्मों में हमेशा ही संवाद की परंपरा रही है□ पर इतना कहना काफी नहीं है□ हमें यह नहीं भूलना चाहि□ कि समाज में धर्म की भूमकिा ब□ तबकों को क्रूरता से मनुष्येतर रखने की रही□ हमारे चकित्सिा-वज्ञिान की परंपरा में बहुत-सी अच्छी बातें हैं, वहीं लाशों के साथ काम करने वालों को अस्पृश्य मानना भी इसी परंपरा का हसि्सा है□ □क ओर यह सही है कि हमारे लोगों के लि□ धर्म पश्चमि की तरह महज रस्मी बात नहीं, वहीं यह भी सही है कि हर धार्मकि रस्म आध्यात्मकि उत्थान से नहीं जु□ी है□ इस देश के कसिी भी हसि्से में सुबह उठते हु□ इस बात को समझा जा सकता है, जब मंदरि-मस्जदि-गुरद्वारों से सुबह की कुदरती शांति को चीरती लाउडस्पीकरों की कानफा□ू आवाजें सुनाई प□ती हैं□ इसमें कोई शक नहीं कि हमारे

जीवन में धर्म का हस्तक्षेप अधिकतर बड़ा दुखदायी होता है।

निजी आस्था और सार्वजनिक जीवन में फर्क करने वाली धर्मनिरपेक्षता का सेहरा वाम को चुनना भी गलत होगा। ऐसी खबरों की संख्या कम नहीं, जब वाम नेता पूजा मंडपों का उद्घाटन करते देखे गए थे। जिस वाम को लेकर जैसी बहस शिव या दीगर बुद्धिजीवी कर रहे हैं, वह सिर्फ अकादमिक संस्थानों के घेरे में है।

आज ऐसी बहस को पढ़ कर लगता है मानो नई सरकार क्या बनी, भारत से स्टालिन का शासन खत्म हुआ!

धर्मनिरपेक्षता की बात करते हुए ईसाई धर्म और विज्ञान की लड़ाई को ले आना शायद यह बताता है कि धर्मनिरपेक्षता पश्चिमी धारणा है। पर क्या आधुनिक राज्य-सत्ता की धारणा भारतीय है? संघ चालकों का प्रेरक हिटलर क्या भारतीय था?

इसमें कोई शक नहीं कि कई लोग इस बात से सही कारणों से परेशान होते हैं कि पेशेदार वैज्ञानिक अपनी धार्मिक आस्थाओं और विज्ञान-कर्म को अक्सर अलग नहीं कर पाते। पर इसका व्यापक समाज में चल रही प्रक्रियाओं पर कोई असर नहीं पड़ता। वैसे ही हमारे वैज्ञानिकों में नास्तिकों की संख्या बड़ी कम है। और अधिकतर व्यवस्था-परस्त हैं। किसी भी राष्ट्रीय सम्मेलन में चले जाएं तो पाएंगे कि अधिकतर वैज्ञानिक इसी चर्चा में मशगूल हैं कि गुजरात में क्या गजब का विकास हुआ है।

सभ्यताओं को पूरब, पश्चिम में बांट कर देखना कितना सही है, यह अपने आप में बड़ा सवाल है। पिछली सदी की मान्यताओं के विपरीत अब यह जानकारी आम है कि पिछले दो हजार सालों में पर्यटकों और ज्ञानान्वेषियों के जरिए धरती के एक से दूसरी ओर ज्ञान का प्रवाह व्यापक स्तर पर होता रहा है।

यह सरासर गलत है कि हिंदुत्व को बुरा मानते हुए भी धर्मनिरपेक्ष लोग दूसरे धर्मों में मूलवाद को नर्मदिली से देखते रहे। ऐसा कहना न केवल झूठ है, बल्कि इससे कहने वाले के निहित स्वार्थों पर सवाल उठते हैं। धर्मनिरपेक्षता में वह शैतान मत ढूंढि, जिसे मध्यवर्ग के लोगों ने उखाड़ फेंकना हो। सच यह है कि हममें से हरेक में एक नरेंद्र मोदी बैठा है। हमारे सांप्रदायिक सोच का फायदा उठाया जा सकता है। इक्तीस फीसद मतदाताओं के अधिकतर के साथ को मोदी और संघ परिवार यही करने में सफल हुआ है। बाकी काम दस हजार करोड़ रुपयों से हुआ, जिसमें मीडिया के अधिकतर को खरीदा जाना भी शामिल है। यह तो होना ही है कि जब 'हिंदू' नाम का राजनीतिक समूह विशाल बहुसंख्या में मौजूद है, तो हिंदुत्व पर नजर ज्यादा पड़ेगी, जैसे पाकिस्तान और बांग्लादेश में उदारवादी इस्लामी मूलवाद पर ज्यादा गौर करेंगे।

यह सचमुच तकलीफदेह है कि मोदी के विरोध को शिव जैसे बुद्धिजीवी विज्ञान और आधुनिकता से जोड़ रहे हैं। वैसे यह एक तरह से विज्ञान के पक्ष में ही जाता है। आखिर 2002 से पहले मोदी के बयानों को कौन भूल सकता है। मुसलमानों के लिए उनके बयान असभ्य और अक्सर आक्रामक होते थे। 'हम पांच हमारे पचीस' उनका तकियाकलाम था। मुख्यमंत्री बनने के बाद वे सावधान हो गए, फिर भी कभी-कभार जबान चल ही पड़ती है। यह सबको पता है। अगर विज्ञान हमें इस मानव-विरोधी क्रूरता से टक्कर लेने की ताकत देता है, तो जय विज्ञान।

फेसबुक पेज को लाइक करने के लि क्लिक करें- https://www.facebook.com/Jansatta

ट्विटर पेज पर फॉलो करने के लि क्लिक करें- https://twitter.com/Jansatta